बीज



(लम्बी कविता)

प्रमोद कुमार शर्मा

विकास प्रकाशन
बीकानेर

प्रथम संस्करण : 2002
मूल्य : 75 रुपए

प्रकाशक : विकास प्रकाशन
4, चौधरी क्वार्ट्स
स्टेडियम रोड, बीकानेर
लेजर टाईप सेटिंग : तँवर कम्प्यूटर आर्ट, बीकानेर ☎ : 530571
मुद्रक : कल्याणी प्रिण्टर्स, माल गोदाम रोड, बीकानेर ☎ : 526890

Beez (Poetry) by : Pramod Kumar Sharma Rs. 75 00

समर्पण

यह कृति
कवि-कथाकार
आदरणीय श्री मालचन्द तिवाड़ी
को सादर....

प्रथम द्रष्टया साक्ष्य

बीज में अनन्त सम्भावनाएं होती हैं जीवन की। समय पर पानी, प्रकाश, हवा और समुचित पोषण मिल जाए, तो बीज सुखदायी-सुफलदायी महावृक्ष का आकार ग्रहण करता है। अनुकूल वातावरण के अभाव में बीज की समस्त सम्भावनाएं सूख जाती हैं। अस्तु, इसी वातावरण के निर्माण हेतु व्यस्त और व्यग्र है– प्रमोद कुमार शर्मा का कवि। वह वर्तमान के विद्रूप से त्रस्त है लेकिन सुखद भविष्य के प्रति निराश होने से भी डरता है, इसलिए किसी न किसी तरह आशा के प्रदीप को जलाए रखना चाहता है। प्रस्तुत कविता उसी त्रास और आस का प्रतिफल है–

''बीज बुद्ध के द्वार पर खड़ा है,
बीज युद्ध के कगार पर खड़ा है।''

कहता हुआ कवि का व्यष्टिगत भय समष्टिगत सम्भावनाओं के सपने बुनता है। एक आन्तरिक अकुलाहट की कोख में पलता हुआ स्वर्णिम भविष्य ही है कविता का कथ्य। बानगी-स्वरूप द्रष्टव्य हैं ये पंक्तियां–

''वह अपनी करुणा से भीगी
अब भी तत्पर है फसल उगाने में
दया से आर्द्र वह अब भी
तत्पर है पाप का बोझ उठाने में
अपनी अन्तरंगता से
अमरता को छूने वाली उसकी सनातन कोख
अब भी तत्पर है हमें लोरी सुनाने में।''

आज की बर्बर अराजकता और अव्यवस्था जब कवि को कचोटती है, तो टुकड़े-टुकड़े उसका मन पारे की तरह बिखर जाता है। निरीह और निरुपाय उसकी दृष्टि में उभरते हैं ये भयावह और वीभत्स दृश्य–

''मनुष्य की आकृति में
अब जो कुछ भी शेष है
दरअसल, वह मानव सभ्यता का
केवल और केवल अवशेष है।''

या यह कि–

''हाथ में लेकर भिक्षा-पात्र
सुदामा भटक रहा है
मथुरा का नक्शा ढूंढ़ते हुए
देश के बियाबान में
जीवन अगर कहीं बचा है
तो अब सिर्फ कब्रिस्तान में।''

लेकिन कल की भोर का उजास उसे अमित ऊर्जा और अदम्य उत्साह प्रदान करता है, तो उसकी लेखनी पवित्र प्रार्थना-गीत भी गुनगुनाती है–

''धन्यवाद परमात्मा !
तूने हमें प्रार्थना का अवसर दिया।
यूं एक अवसर ही तो है जीवन
विवेकवान यह अवसर खोते नहीं हैं
और अविवेकी के पास अवसर होते नहीं हैं।''

समग्रतः कवि का मन्तव्य व्यक्ति के विवेक को जगाकर, उसे उसकी अस्मिता से परिचित करवाना रहा है। उसे विनाश से विमुख कर सृजन में संलग्न करवाना रहा है, जो पूरी कविता के ताने-बाने में स्पष्टतः परिलक्षित होता है। अच्छी बात यह लगी कि भाषागत कसाव और भावात्मक रचाव में कवि प्रमोद कहीं अस्पष्ट और असहज नहीं हुए। वे अपना आक्रोश व्यक्त करते हैं, समाधान सुझाते हैं और अपने पाठकों को सोचने पर विवश कर नेपथ्य में चले जाते हैं। भाषा सम्बन्धी किसी प्रकार की हिपोक्रेसी उनकी रचना में नहीं है। दुर्बोधता और दोगले मानदण्डों से दूर उनकी यह विचार-कविता सुधी पाठकों को आन्दोलित करेगी, ऐसा मेरा विश्वास है।

29, मण्डी ब्लॉक, *जनकराज पारीक*
श्रीकरनपुर-335073

बीज

(लम्बी कविता)

"बीजं मां सर्वभूतानां विद्धि पार्थ सनातनम्..."

(श्रीमद्भागवत गीता-७/१०)

एक

बीज अस्तित्व है
प्राण का ।

वह सदैव हरा-भरा रहता है जो
उसी में छुपा हुआ अकेला कहीं
रच रहा होता है अपनी ही माया से
एक सृष्टि–
बीज साक्षात् ब्रह्म है ।

कोई भी हो सकता है बीज
गोकि हर कोई बीज ही तो है
हालांकि बहुत कम लोग
यह भेद समझ पाते हैं
जबकि होना–
हमें केवल बीज भर ही होता है !

अद्‌भुत है बीज की आदिम यात्रा
एक मात्र वही है सच्चा सनातन
सिरजता हुआ स्वयं को ।

बीज एक घटना है–
घटती हुई निरन्तर, निरन्तर
कई-कई योनियों, कई-कई लिंगों
और कई-कई भेदों में एक साथ
कौन है इसका साक्षी ?

एक गीत गाती हुई चिड़िया
रंग भरता हुआ एक चित्रकार
प्रार्थना करता हुआ सन्त
या वह हर कोई– जो
होने भर का बोध लिए
इस चर-अचर में करता हुआ विचरण
देखता-भोगता, सुनता, सूँघता, चखता
जानता, मानता या कि– सब कुछ में
बसता हुआ प्राण !

उसकी भाषा है पहाड़ से लेकर नदियों तक
अणु से लेकर परमाणु तक
धूप से लेकर छाँव तक
शहर से लेकर गाँव तक

सूरज से लेकर चाँद तक
शेर से लेकर माँद तक
धरती से लेकर आकाश तक
अंधेरे से लेकर प्रकाश तक
सब कुछ उस अनन्त शक्तिशाली
परमात्मा का बीज ही तो है ।

कोई भी बीज
अपने समकालीन बीज के लिए
होता है केवल बीज ही
जबकि कई मर्तबा
पेड़ नहीं होता पेड़ ।
खातिर अपने समकालीन के ।

हम सोचते हैं कभी प्रेम में
कि जैसे हम प्रेमी-प्रेमिका हैं
परन्तु क्या यह सत्य है ?
क्या वही का वही, वैसे का वैसा ही
होता है सब कुछ ?

क्या ऐसा नहीं होता कि
एक दूकानदार रोज सुबह
धूप-बत्ती करता हुआ
ग्राहकों से दिन भर यही जानने की कोशिश करता है

कि वह कौन है ?

जबकि निरन्तर बदल रहा है दूकानदार
निरन्तर बदल रहे हैं ग्राहक
निरन्तर बदल रहे हैं निष्कर्ष
सब कुछ बीज में समाता हुआ
सब कुछ बीज में से निकलता हुआ
एक दूकानदार भी,
एक ग्राहक भी !

सब कुछ बदल रहा है तेजी से
तेजी से बदल रहे हैं नाम-पते
तेजी से बदल रहे हैं डाकखाने
तेजी से बदल रहे हैं मूल्य
तेजी से बदल रहे हैं शहर
तेजी से बदल रहे हैं कवि
और तेजी से बदल रहा है आदमजात ।

जगत जितना आधुनिक हो चुका है
उतना ही बीज भी– या कि
बीज के भीतर से ही निकली है
सारी आधुनिकता ।

लेकिन क्या है वह सुखदायी ?

कितनी चालाकियाँ, कितनी विद्रूपता
कितनी क्रूरता, कितनी पशुता
कितनी प्रताड़ना, कितना संहार
न जाने कितना कुछ छुपा है
बीज की धमनियों में विनाशकारी
जो आज बन गया है संकट प्राण का ।
प्राण–
जो कि अस्तित्व है बीज का ।

अविचार के इस जगत में
विचार करता हुआ बीज
अपनी व्यथा कहे भी तो किसे
क्योंकि यहाँ सब कुछ नींद में हैं
और जगत एक सपना है ।

स्वप्न है बीज
स्वप्न है परमात्मा
दोनों ही निरन्तर एक-दूसरे को
देखते हुए–
एक-दूसरे के लिए ही हों जैसे !

यूँ योग की भाषा में
सभी कुछ-सभी कुछ के लिए है
यह अलग बात है कि कभी-कभी

जड़ें भूल जाती हैं दरख्त को
लेकिन बीज कभी नहीं भूलता
कि वह बीज था
बीज है
और बीज ही रहेगा ।
भूल का बसेरा ही नहीं बीज में !

कुछ भी रहस्य से वंचित नहीं
बीज तो निश्चय ही
सदियों से यह रहस्य
अपनी गूढ़ गहराई से
हमें दे रहा है आवाज ।

''उठो-जागो !
चलो अन्धकार से प्रकाश की ओर''
जब भी कोई जागा है
बीज में ही जागा है
बीज में जागना ही भला है
बीज जागना ही कला है ।

अभी सब कुछ नींद में है— महा नींद में !
नींद में ही उड़ाए जाते हैं हवाई जहाज
नींद में हो रहे हैं विस्फोट
नींद में ही कर रहे हैं नेता अपील

वोटर डाल रहे हैं वोट नींद में ही ।
नींद होती भी खूबसूरत है
जिसकी भी नींद को किसी की नजर लगती है
वह दूसरे की नींद में खड़ा कर देता है–
एक घमासान–

यह समय घमासान खड़े करने का है।

यूँ कोई भी समय बीज के लिए
किसी घमासान से कम नहीं रहा
फिर वह चाहे महाभारत का समय हो
या महान भारत का !

बीज सदा से ही अर्जुन रहा है–
युद्धरत् !
विषादरत् !!
संघर्परत् !!!

वह नहीं हट सकता अपने गणित से परे ;
समकालीन समय को साधता हुआ
अपने धनुष की थक चुकी प्रत्यंचा पर
बीज गुजर रहा है एक महत्त्वपूर्ण दौर से !

जवान युवा अभिनेत्रियों से लेकर

बूढ़े नजूमियों तक हर कोई
बीज को लेकर परेशान है ।

अमेरिका उसे उगाता है
अपनी हथेलियों पर
पाकिस्तान उसे उतारना चाहता है आस्मां से
कुछ देश सुधारने में लगे हैं बीज की नस्ल
कुछ दे रहे हैं मित्र देशों को शोध का निमन्त्रण
कुछ निकाल रहे हैं शत्रु देश के बीजों को बाहर
कुछ लेकर बैठे हैं तराजू विश्व के मुद्रा बाजार में

यह दुनिया बहुत ही भली लगती है वहां से
जहाँ हम खड़े हैं एक त्रिकोण पर
पूरी दुनिया से यहाँ बीज आ सकते हैं
जा सकते हैं बेखौफ किसी भी देश में
वसुधैव कुटुम्बकम् : कोई कल्पित वाक्य नहीं
आत्मा है बीज का हमारे लिए ।

पाप और पुण्य
आत्मा के आवरण मात्र हैं
जब-जब बढ़ता है पाप
तब-तब भगवान होते हैं प्रकट
जब-जब प्रकट होते हैं भगवान
तब-तब प्रस्फुटित होता है बीज भी !

बीज धर्म है
वही धारण करता है जगत को
हमारा यह जगत गुजर रहा है
जिस पुल से, वह टूटने ही वाला है ।
जगह-जगह बिछ चुकी हैं–
बारूदी सुरंगें
लुभाने लगे हैं हिंसा और दंगे
कफन के बिना नाच रहे हैं मुर्दे नंगे
और हर कोई बचा रह जाना चाहता है जिन्दा
जबकि सम्भावना कम है जिन्दगी की
फिर भी बीज निभा रहा है अपना धर्म
धर्म !
जिसे भूलते ही जा रहे हैं हम सब
क्योंकि भूलते जा रहे हैं हम बीज को
बीज के प्रस्फुटन को !

हम कौन थे ? क्या हैं ? क्या होंगे अभी ?
ये प्रश्न बीज के प्रश्न हैं
प्रश्न– जिनसे बचा नहीं जा सकता ।

अब ये अलग बात है कि
हम लोग लगातार बचने की कोशिश करते हैं
घर के प्रश्न छुपा देते हैं टीवी में
बाजार के अखबार में

मन्दिर के मस्जिद में
जीवन के मृत्यु में
बस्ती के श्मशान में
इधर के उधर में
उधर के इधर में
यानी प्रश्नों से मुंह चुराना ही हो गया हो जीवन !
इतिहास में किसी भी बीज को
यह जीवन दर्शन कभी पसन्द नहीं आया
इतिहास है–
बीज ने जब भी प्रश्न उठाया
मनुष्य– उसका ऋणी हुआ है ।

शेष हैं–
अभी शेष हैं प्रश्न कृष्ण के
मोहम्मद से लेकर पोप जॉन पाल, बुद्ध के
शान्ति और युद्ध के–
बहुत प्रश्न शेष हैं– किन्तु उत्तर
उत्तर केवल बीज में है ।

आदमी आज का
खड़ा है एक दौराहे पर
जिसका एक रास्ता जा रहा है बीज की तरफ
और एक संसार को !
बीज की तरफ जाने वाला रास्ता

इन दिनों फिर से किसी वास्को-डी-गामा की
प्रतीक्षा में है
जबकि संसार बन चुका है
नगर-वधू के घर का रास्ता ।

हर कोई भाग रहा है काम की तरफ
हर कोई दौड़ रहा है दाम की तरफ
पागलों की एक पूरी जमात
दौड़ रही है अपने विनाश की तरफ
विनाश– जिसकी प्रतीक्षा
हमेशा रहती है बीज को ।
प्रतीक्षा नव-प्रस्फुटन की !

कोई भी प्रलय
होती है सृजन की प्रस्तावना
सावधान !
यह प्रलय का समय है
सृष्टि की लय लगभग भंग होने वाली है
और बीज हमसे खफा है ।

क्यों इतना सारा जहर
इतनी सारी मिसाइलें
इतनी सारी राजनीतिक कुटिलताएं
इतने सारे विश्वासघात

इतना सारा धुँआ
इतना सारा रुदन
हमने भर दिया है बीज में
जबकि वह रिक्त होना चाहता है
इस जकड़न से–

शून्य में से निकलता पूर्णता का स्वप्न
आखिर भंग क्यों हो रहा है ?
आजादी का काफिया आज
इतना तंग क्यों हो रहा है ?

हाय ! हमारी आजादी कहाँ है ?
हाय ! हम कहाँ हैं ?

दो

कुछ टूट रहा है बीज के भीतर
कुछ फूट रहा है बीज के भीतर
कुछ तप रहा है बीज के भीतर
कुछ पक रहा है बीज के भीतर
ऐसा कुछ– जो आज तक नहीं हुआ ।

बीज स्तब्ध है–
अब मोहम्मद नहीं डरते
धरती के कॉपने से
बल्कि हंसते हैं किसी बच्चे की तरह
ममता को भांपने से
जरूर ही धरती की कोख में
कॉपा होगा कोई बीज !

क्या टूट रहा है बीज के भीतर

क्या फूट रहा है बीज के भीतर
क्या तप रहा है बीज के भीतर
क्या पक रहा है बीज के भीतर
यह बीज से पूछने की जरूरत नहीं !

बीज से अब कोई सवाल नहीं
सवाल तो केवल स्वयं से
स्वयं–
जो कभी था एक बीज ।

कहाँ छुप गया वह बोध
जो भीतर ही करता था शोध
अब तो केवल भय के गहरे कुंए हैं
जिनमें उल्टे लटके चमगादड़
स्याह रातों का रुदन गाते हुए
सभ्यता के प्रस्थान की घोषणा करते हैं ।

कौन है वह–
जो छुपकर बीज में ही
नष्ट करने पर तुला है सन्तति !

यह विश्व-युद्ध का समय है–
यह विश्व-युद्ध ही तो है–
किन्तु– अब विश्व-युद्ध बाहर नहीं

भीतर लड़ा जा रहा है–
भीतर– बीज में ही कहीं गहरे !
जहाँ अंधेरे की इमारतों में
रोशनी से भरे योद्धा ढूँढ़ रहे हैं मचान
कई सारे चित्रगुप्त
लिख रहे हैं उनके लिए सम्वाद
रम्भाएं कर रही हैं उत्तेजक नृत्य
कितने ही यक्ष, गन्धर्व
और किन्नर रच रहे हैं स्वांग
कि जैसे सारे कुंओं में
डाल दी है किसी ने एक साथ भाँग !

अंधेरे के इस महा साम्राज्य में
कहीं गहरे से उठ रही हैं सिसकियाँ
एक छुपा हुआ विलाप
विवशता मरते हुए मनुष्य की
ओढ़कर कर्मों की चादर मैली-सी
पड़ी है उनके कदमों में
आत्मा बीज की ।

नहीं– इस बियाबान में नहीं है शेष
मनुष्य की गन्ध आदिम
नहीं– इन योद्धाओं के पास नहीं है
क्षमा का धन, नहीं–

नहीं है इनके भीतर
हृदय और मन ।
ये केवल यन्त्र हैं
यन्त्र– जिन्हें निगल लेना है सब कुछ !

किन्तु– कौन है वे मायावी
जो घुसकर बीज में ही
बना चुके हैं बर्बर फौजें
किले जादूई
तिलिस्मी सुरंगें
और बारूद के गोले
तरह-तरह के रूप-रंग वाले ।

उनकी जेब में रखा है विश्व का मुद्रा बाजार
वे करते हैं सरेआम सांसों का व्यापार
हिंसा उनकी ऑखों का काजल है
नफरत से उनका रोम-रोम पागल है
वे स्वयं-भू–
बना चुके हैं पूरे विश्व को अपना दास
और दासता–
बीज को कभी रास नहीं आई
लाओत्से से लेकर गांधी तक
हर कोई बीज की स्वतन्त्रता के लिए लड़ा है
बीज–

आज फिर से चौराहे पर
किसी मसीहा की प्रतीक्षा में
खड़ा है–
उसे तोड़ने हैं अपनी आत्मा के पहरे
और लड़ना है एक युद्ध–
जो घटेगा उसके भीतर ही कहीं गहरे ।

गुलाम
नहीं कर सकता सृजन
इसीलिए– बीज नहीं होता गुलाम कभी
इसीलिए– बीज के खिलाफ खड़े हैं
सरमायेदार सभी ।

वे इकट्ठा करते हैं बीज
उन्हें जांचते-परखते
सजाते-संवारते हैं
कभी भरते हैं रंग तो कभी बारूद
और मृत्यु को पुकारते हैं–

यह सब उन्हें लगता है
बेहद खूबसूरत–
इसी के लिए वे बनाते हैं
बड़े-बड़े आलीशान मकान
जिनमें रहते हैं–

खूबसूरत चश्मोंवाले उद्योगपति महान
घिरे रहते हैं वे वड़ी-वड़ी आधुनिक वन्दूकों से
जिनके नाम भी होते हैं इतने खूबसूरत–
कि कमवख्त जैसे होते हैं–
विमान परिचारिकाओं के ।
यह समय–
उनके लिए खूबसूरत समय है
वन्दूक से लेकर तलवार तक
औरत से लेकर कार तक
सब कुछ खो गया–
खूबसूरती के इस मायावी जंगल में
तो खो गया बीज भी ।

यूँ बीज से खूबसूरत कुछ भी नहीं !
कोई जिन्स, कोई पहाड़,
कोई प्रधानमंत्री
कोई बिन लादेन
कोई अमिताभ बच्चन
या कोई भी चमकदार दिखनेवाली वस्तु
नहीं है खूबसूरत बीज से ।

यह सृष्टि बीज का विस्फोट भर है
आदमी से लेकर बन्दर तक
वाहर से लेकर अन्दर तक

घर से लेकर श्मशान तक
मन्दिर से लेकर दूकान तक
हर कोई इस स्फोट से बिखरी
आकृतियाँ भर हैं–
आकृतियाँ– जिन्हें संवारता है बीज
बीज ही करता है उनके सारे शृंगार
बीज ही देता है उन्हें एक संसार ।

सड़कें, चौराहे, संसद और शराबखाने
सब अपने समय को जिन्दा रखना चाहते हैं
किन्तु कोई भी नहीं देख रहा कि सारा संसार
मर रहा है बीज के भीतर
या कि बीज मर रहा है संसार में !

कुछ क्रूर किस्म की प्रेतात्माएं
कुछ जटिल किस्म के बाबा
कुछ घोर काले कर्मो वाले लोग
और कुछ लफ्फाजों की फौज से
कभी कोई राष्ट्र नहीं बनता महान
बीज को प्राणवान बनाने से ही
राष्ट्र में आते हैं प्राण।

मित्रो ! हमारे प्राण कहाँ हैं ?
हमारा राष्ट्र कहाँ हैं ?

तीन

कवि फूँकते हुए सिगरेटें
दार्शनिक पीते हुए नारियल
बूढ़ी अभिनेत्रियां करती हुई रंगमंच
आलोचक सूँघता हुआ सत्य किताबों में
ढूँढ़ रहे हैं केवल बीज को ही !

पुराने शहर के बूढ़े मन्दिर की तरफ जाती सड़क पर
कभी-कभार गुजरते इक्केवाले की आँख में था बीज
तो था वह नए शहर के सिनेमा को जाती
इम्पाला में बैठे चुरुट पीते ड्राइवर की जाँघ में
बिस्तर पर कृत्रिम सांस लेते फेफड़ों में वही था–
और था मदारी का खेल देखनेवाले तमाशबीनों की
तालियों में !
हर कहीं–
केवल बीज ही था

लेकिन सब उसका पता ढूँढ़ रहे थे।

कुछ हत्यारे पहनकर नकाब बदनाम चेहरों पर
तो बूढ़े आशिक समुद्र की खारी लहरों पर
कुछ अफसर किस्म के पत्रकार छापाखानों में
मौलवी अपने दुआ भरे अरमानों में
अर्थशास्त्री अपने गणित में
तो ज्योतिषी अपने फलित में
ढूँढ़ रहे हैं केवल बीज ही !

कहाँ छुप गया होगा वह ?
कुछ लोग कह रहे हैं वह खो गया
तितली के रंगीन पँखों में
तो कुछ कहते हैं वह छुप गया
अभिनेत्री के मॉसल अंगों में !
कोई कहता है वह शहर के पुराने
कवि की नई किताब में छुपा है
तो कोई कहता है वह घाटी के फटते
धमाकों में रुका है ।

हालांकि लापता है बीज
फिर भी लोग उसकी खबर रखते हैं–
वे दौड़ाते हैं अपनी चेतना के घोड़े
सात आकाशों के पार

ढूँढ़ते हैं निस्सार में सार
करते हैं वे दावा
बोलते हैं वे धावा
और अपने-अपने सत्यों को उतारते हैं
भीड़ के जेहन में ।

किन्तु क्या है सत्य ?

क्या विश्व-सुन्दरी सदा मुस्कराती ही रहती है
क्या पैट सैम्प्रास रहता है हरदम कोर्ट में ही
क्या वाजपेयी हमेशा ही घुटने के दर्द से
रहते हैं परेशान ?
क्या मुशर्रफ इसी तरह करता रहेगा
विश्व को हैरान ?

नहीं– कुछ भी सत्य नहीं
यह जगत घटना भर है
बीज में घटती हुई निरन्तर
तो आओ मेहरबानो !
हम सत्य का अनुसंधान करें
फिर चाहे अहमदाबाद हो या हो पटना
खोज सकें हम–
बीज में घटने वाली हर एक घटना ।
कुछ है जो घटनेवाला है

ऐसा नाजायज-सा, ऐसा डरावना
ऐसा अशुभ, ऐसा भयानक
कि जिसके घटने भर की आशंका से ही
सिमटता जा रहा है बीज अपने ही प्राणों में ।

सूख रहा है कंठ सूर्य का प्यास के मारे
पृथ्वी को दिख रहे हैं दिन में ही तारे
आकाश हो गया है तिरछा चाँद को ढोते
ब्लैक होल्स ने सोख लिए जल के सोते
अग्नि कर रही सबके सिरों पर काल-नृत्य
बीज हो रहा है भयभीत;
देखकर यह अजीब कृत्य

उसकी धमनियों में ईश्वर की जगह
दौड़ रहा है साइनाइट
पुतलियों में नृत्य कर रही हैं प्रेत-आत्माएं
आंतें रोटी की प्रतीक्षा में बन चुकी हैं
पथरीली अहिल्या
और चेहरा गिर गया है
अफगान के रेगिस्तान में
हम देख रहे हैं उसकी शवयात्रा
समय के रिक्त-स्थान में !

व्हाइट हाऊस में हो रही है शोकसभाएं

पत्रकार संसद की दीर्घाओं में बांट रहे हैं पर्चे
नसवार सूँघते माफिया सरदार
बांट रहे हैं बन्दूकें
और अफसर भर रहे हैं नोटों से सन्दूकें ।

सब कुछ बीज की शवयात्रा का जैसे
सीधा प्रसारण है बुद्धु बक्से पर
औरतें घरों में दुबकी
मना रही हैं पित्तरों को !
और बच्चे धुनते हुए सिर स्कूलों में
देख रहे हैं समय के भित्ति-चित्रों को !

लड़किया लगा रही हैं खरगोशों का खून होंठों प
वेश्याएं बैठी हैं शोकाकुल अपने कोठों पर
राष्ट्र गहरी उधेड़बुन में पड़ा है
और नागरिक राजपथ पर भौंचक खड़ा है ।

किन्तु क्या बीज मरा ?

कोई भी हिरोशिमा
हमेशा के लिए नष्ट नहीं होता
हमेशा के लिए राम मन्दिर भ्रष्ट नहीं होता।
हमेशा ही नहीं जलता रहेगा गुजरात
सरस्वती की कोख से

लुप्त नहीं रहेगा प्रभात ।

सब कुछ–
फिर-फिर से होता है प्रकट जैसे
फिर-फिर से खो जाने के लिए ।

बीज– अमृत-कलश है
और अमृत कभी नहीं मरता
उसमें भरे हैं हीरे-जवाहिरात
नदियां-पहाड़, चाँद-तारे
यहाँ तक कि स्वयं परमात्मा और
उसके दूत सारे !

चलो !
हम बीज की अराधना करें
उसके लिए लिखें एक गीत
गाएं एक प्रार्थना
और बन जाएं उसके मीत ।

समाचार पढ़ता हुआ समाचार-वाचक
टीवी में घर बसाता हुआ अभिनेता
गीत गाता हुआ गायक
और युद्ध लड़ता सेनानायक
दरअसल–

प्रार्थना ही कर रहे होते हैं बीज की ।

चॉद और सूरज
निकलते हैं उसी की प्रार्थना में
फूल खिलते हैं उसी के लिए
उसी के लिए स्त्रियां गाती हैं
मन्दिर में भजन
और जादूगर सरकार उसी के लिए
करते हैं गायब ताजमहल ।
उसी के लिए मेधा पाटकर का
दिल जाता है दहल ।
दुनिया की कोई भी कला
केवल बीज के लिए प्रार्थना है मनुष्य की ।

हर कोई प्रार्थना नहीं कर सकता
हर कोई बीज में रंग नहीं भर सकता
जबकि मनुष्य देह मिली ही प्रार्थना के लिए है ।
मनुष्य ही क्या–
प्राणी मात्र की देह प्रार्थना ही है बीज की ।

वहुत गूढ़ है बीज की आराधना
धन्यवाद परमात्मा !
तुमने हमें प्रार्थना का अवसर दिया
यूँ एक अवसर ही तो है जीवन

विवेकवान यह अवसर खोते नहीं हैं
और अविवेकी के पास अवसर होते नहीं हैं ।

बीज हमें विवेक देता है ।

किसी कार को बम विस्फोट से उड़ाने में
किसी को बेवजह जिन्दा जलाने में
किसी सन्त को बुरा-भला कहने
और किसी अफसर की सेवा में रहने के लिए
जरूरत नहीं होती विवेक की ।

यह क्योंकर हो गया मित्रो !
हम तो विवेक लेकर पैदा हुए थे
हमने तो विवेकानन्द भी पैदा किए हैं
और रामकृष्ण परमहंस फिर किसलिए हैं ?

हाय ! हमारा विवेक कहाँ खो गया ?
हाय ! हमारा आनन्द कहाँ खो गया ?

चार

क्यों यह धरती बन चुकी है प्राणों का
गुप्त बाजार ।
क्यों चींटियों के सामने हाथी हो गए हैं
लाचार ।
क्यों आकाश होता ही जा रहा है मटमैला
क्यों हमारे सम्बन्धों का स्वाद हो गया कसैला !

जरूर हमें किसी की नजर लगी है; क्योंकि
हमारा खून सड़कों पर बहने के लिए नहीं
एक-दूसरे के दिल में खुदा बनकर रहने के लिए
सावधान !
हमारे खून में घुस गया है शत्रु
वह रचता है तरह-तरह के रूप
और सनातन शत्रुता के साथ फिर से
खड़ा हो जाता है–

बीज को करने चकनाचूर
और चुरा लेता है हमारी छाँव और धूप ।
बीज, शत्रु से कभी भयभीत नहीं होता
वह जानता सारे चक्रव्यूहों की रणनीति
उसे पता है समकालीन समय की ज्यामिति
उसके पास है सारे आणविक अस्त्र !
वह अकेला ही अपने आप में फौज है पूरी सशस्त्र !

किन्तु क्या युद्ध है अवश्यम्भावी ?
क्या सृजन में ही छुपी है प्रलय ?
क्या मृत्यु और जीवन है अर्थहीन ?
क्या मनुष्य विनाश में ही रहेगा तल्लीन ?

नहीं, मित्रो !
हमारे साथ कुछ गलत घट रहा है
ऐसा जो बहुत ही सही लग रहा है
उसी को खोज रहा है बीज इन दिनों ।

प्रकाश अब हमारे घरों की यात्रा नहीं करता
पक्षी अब हमारे लिए नहीं गाते हैं गीत
देवता नहीं हंसते अब हमारे दु:खों पर
और आंसू अब नहीं छूते
हमारे हृदय के ईश्वर को ।
टीवी की खबरें

स्त्रियों की तरह
रीझाने में लगी है हमारी चेतना
कुटिल राजनीतिज्ञों की नीतियां
डसने लगी है हमारी देशना ।
हवाएं पूछने लगी हैं अपने ही वतन में
हमारा पता
और पुलिस अफसर करने लगे हैं
ईमानदार होने की खता ।
कुल मिलाकर यह समय
एक खराब कार में सवारी करने जैसा है
बीज के लिए ।

कोई उम्मीद नजर नहीं आती
कोई सूरत नजर नहीं आती
यह आवाज बीज की आवाज है
यह दर्द बीज का दर्द है
बीज को दर्दमन्दों की जरूरत है

हम सब दर्दमन्द हैं ।
हम सब गा सकते हैं गीत
मित्रो !
हम अपना दर्द कहाँ भूल गए ?
हम अपना गीत कहाँ भूल गए ?

पांच

बिना श्रद्धा के कोई गीत नहीं गा सकता
बिना श्रद्धा के कोई दर्द पैदा नहीं होता
श्रद्धा को कोई चुरा नहीं सकता
श्रद्धा को कोई छुपा नहीं सकता
फिर भी कोई चुरा ले गया है हमारी श्रद्धा
बीज कर रहा है हमें इसका संकेत ।

संकेत ही करता है बीज केवल
वह संकेत ही बन जाता है बुद्ध
वह संकेत ही बन जाता है युद्ध
बीज बुद्ध के द्वार पर खड़ा है
बीज युद्ध के कगार पर खड़ा है

वह छुप जाना चाहता है सत्संग की ओट में
वह छुप जाना चाहता है कविता की कोख में

वह छुप जाना चाहता है शेर के वजन में
वह छुप जाना चाहता है मीरां के भजन में

उसे नहीं चाहिए मोटर, गाड़ी, बंगले
उसे नहीं चाहिए हवाई जहाजों के हमले
उसे नहीं चाहिए लक्स साबुनें सुनहरी
उसे नहीं चाहिए एयर कंडिशंड दुपहरी।

इमारतों के ढेर तले वह दबकर नहीं चाहता मरना
नहीं चाहता वह कोई शृंगार करना
वह बिकना नहीं चाहता किसी भी बाजार में
वह दिखना नहीं चाहता किसी भी दरबार में

हॉ; वह धूल में मिलना जरूर जानता है
हॉ; वह फूल पर मिटना जरूर जानता है

किन्तु; वह धूल कहॉ है ?
किन्तु; वह फूल कहाँ है ?

छह

देवी है श्रद्धा ब्रह्मास्त्र से सज्जित
वह भरती है रक्त-बीजों में प्राण
जो खो गया है इस सदी के पुत्रों के हाथों से
और लेकर भिक्षा-पात्र मांग रही है त्राण !
कालाग्नि की ज्वाला में
दग्ध होती वासनाओं का लेकर भार
अब कहाँ होता है
मुक्तिबोध कोई लाचार

माँ को खोजने की विकलता
अब कहाँ है किसी परमहंस में
कोई अन्तर नहीं रह गया अब
सुदामा और कंस में ।
यह तो मछुआरों का समय है
वे पकड़ते हैं मछलियों को जाल में

और पकाकर उन्हें जिन्दा
डाल देते हैं नरक में हर हाल में
और--
औरतों के गर्म गोश्त को आगोश में लेकर
भरते हैं अपने जेहन में
दुनिया को वर्बाद करने के खयाल ।

खयालों से ही ये दुनिया आवाद होती है
खयालों से ही ये दुनिया वर्बाद होती है
खयालों से ही कोई गांधी बनाता है भारत महान
खयालों से ही कोई जिन्ना रचता है पाकिस्तान ।
एक खयाल ही वनता है भगतसिंह
एक खयाल ही बनता है जलियांवाला बाग
एक खयाल ही बनता है अर्जुन
एक खयाल ही बनता है मीरां का राग ।

मेरे खयाल से अभी
हमारे देश में कुछ अच्छे लोग हैं
लोग हैं तो अच्छे खयाल भी होंगे
अच्छे खयाल हैं तो फिर अच्छे हाल भी होंगे
अच्छे हाल हैं तो अच्छे साल भी होंगे

हाय ! हमारे अच्छे हाल कहाँ हैं ?
हाय ! हमारे अच्छे साल कहाँ हैं ?

सात

कहते हैं--
बीते हुए पर रोना मूर्खता है
किन्तु आज पर तो रोया ही जा सकता है
रोने से ही संवर सकता है आज
सिर्फ एक ऑसू में छुपा है यह राज
ऑसू--
जो समझ सके आज का अर्थ ।

अर्थ...
उसी के लिए किसान जोतता है हल
उसी के लिए गृहणियां भरती हैं जल
उसी के लिए बच्चे पढ़ते हैं भारी-भरकम किताबें
उसी के लिए नेता बनाते हैं दल ।

अर्थ की खोज में ही है सब कुछ

अर्थ की खोज में ही है अब कुछ
बीज को अर्थ की जरूरत है
अर्थ को बीज की जरूरत है।

अब्दुल कलाम किस तरह बने वैज्ञानिक
क्यों भारत गाता है मदर टेरेसा की कहानी
क्योंकर अटल लिखते हैं कविताएं
क्यों मकबूल बनाते हैं चित्रकथाएं

सब अर्थ है–
सब कुछ का अर्थ है–
और इस अर्थ का अभाव ही
सारा अनर्थ है ।

किसमें है अर्थ–
कोई कहता है पहाड़ पर
गैस का सिलेण्डर लेकर चढ़ने में है
कोई कहता है जन्म-कुण्डली पढ़ने में है
कोई कहता है मन्दिर में प्याऊ बनाने में है
कोई कहता है पाटेकर की फिल्म देख आने में है
जितने मनुष्य– उतने अर्थ ।
जितने वेश– उतने अर्थ ।
जितने देश– उतने अर्थ ।
जितने अविष्कार– उतने अर्थ ।

फिर भी अर्थ नहीं मिल रहा है बीज को
फिर भी खोजनेवाले नहीं मिल रहे हैं बीज को ।

हाय ! हमारे अर्थ कहां खो गए ?
हाय ! हमारे अर्थ खोजनेवाले कहॉ खो गए ?

आठ

मेहराबदार मकानों की आरिशों पर रखे
दीयों की लौ एक जैसी होती है
खेतों में खड़ी फसलों का रंग भी
होता है एक जैसा
एक जैसा होता है हर ईमानदार आदमी
एक जैसी होती है शक्लें शहीदों की

एक जैसी होती हमारे सपनों में
खून पीनेवाली चुड़ैलें
एक जैसे होते हैं
बन्दूकों के बट थामनेवाले हाथ
एक जैसी होती हैं हत्यारों की आँखें
एक जैसी होती हैं वेश्याओं की हसद

एक जैसा है मानस और कुरान

एक जैसा है घर और मचान
एक जैसा है मन्दिर और मसान
एक जैसा है दफ्तर और दूकान

फिर हमारे अर्थ इतने भिन्न-भिन्न
कैसे हो गए ?
फिर हम इतने छिन्न-भिन्न
कैसे हो गए ?
फिर हम इतने सौगवार क्यों हो गए ?
फिर हम इतने बीमार क्यों हो गए ?

हमारी ऑखों और रास्तों में पहचान क्यों नहीं है ?
हमारे हाथों और हल का सम्मान क्यों नहीं है ?
हमारे जिस्म और जॉ एक क्यों नहीं है ?
हमारे खयाल और हकीकत नेक क्यों नहीं है ?

भीतर बीज के एक है सब कुछ जबकि–

हाय ! हमारी एकता कहॉ गई ?
हाय ! हम कहॉ गए ?

नौ

कुछ लोग प्रतीक्षा कर रहे हैं
सूर्खाबदार परों की
वे करते हैं कल्पना चॉद पर घरों की ।
वे अब भी खड़े हैं–
हवाई अड्डों पर लेकर फूल मालाएं !

उन्हें पीछे के रास्ते लगते हैं लुभावने
वे लड़ते हैं अन्धेरे का अंधा युद्ध !
उन्हें याद रहती है हर वो तारीख
जिसमें किसी ब्रीफकेस का पता लिखा
रहता है–
वे समझते हैं स्वयं को सौ प्रतिशत शुद्ध !
वे खाली हाथों से पैदा कर देते हैं अण्डा !
वे खानदानी मसखरे हैं दरबारों के–
उन्हें अब भी अच्छा लगता है तिरंगा झण्डा

उनके पास होते हैं खुफिया लोगों के पते
उनके चश्में नजर के नहीं होते
उनके भीतर होता है एक अंधा कुंआ
उनकी नींद में होता है एक पूरा जंगल

बीज–
इनके लिए निरापद है
वह चाहता है इन सबसे क्षमा
उसे नहीं भाता रिश्तों का समाज-शास्त्र
वह जानता है उस अंधे घोड़े को
जिसकी पीठ पर–
एक निर्वस्त्र लड़की बैठी रहती है–
जो आती है हर रात उसके सपनों में

बीज कभी इन लोगों का
एतबार नहीं करता
बीज कभी इन लोगों को
प्यार नहीं करता
वह सोचता जरूर है–
जिस मिट्टी में राम-कृष्ण जैसे
परमहंसों के चरण पड़े–
वह इतनी बांझ क्यों होती जा रही है
और कुछ लोग–

हिन्दुस्तान में
क्यों खोज रहे हैं पाकिस्तान !

'जननी पूत जनै तो ऐड़ा जन
का दाता का सूर'—
क्यों हम भूलते ही जा रहे हैं
यह सनातन दस्तूर !

पृथ्वी पर बढ़ गया है भार
गर्म हो गया है मुद्रा बाजार
हत्यारे पहन कर दस्ताने
लिख रहे हैं प्रेम-पत्र
भरकर कण्डोमों में गुण-सूत्र
कभी निर्मित नहीं होते राज्य एक-छत्र ।

यह युग यन्त्र का है
यह युग मन्त्र का है
यह युग तन्त्र का है
यह युग जन्त्र का है

इस युग में छुपे हैं
अपनी सदी के महान सेनानायक
उनके हाथों में हैं खोपड़ियों के ढेर
हर एक शेर के लिए वे बन जाते हैं

सवा शेर !
अपने खयालों में भरकर बारूद
वे कर देते हैं हर विरोधी को
नेस्तनाबूद !

हसद उनका पहला स्वाद है
जंग उनका दस्तूर
खौफ उनका धन्धा है
और ईमान अन्धा है
वे जब चाहें–
जिस बीज में उतार जाते हैं
और कर डालते हैं उसका
क्रियाकर्म
भर देते हैं उसमें–
अपनी सारी क्रूज मिसाइलें
बारूदी सुरंगें, दमदार झूठे भाषण
मीठे आश्वासन और सपने और भ्रम !

एक बीज होता है पूरा एक साम्राज्य
उसका पतन सब कुछ का पतन है
उसका उत्थान सब कुछ का उत्थान है
मगर यह खयाल जितना पाक है
यह वक्त उतना ही नापाक है

किसके पाँवों के निशान देख रहे हैं हम लोग
हमारी पलकें किस अघोरी लीला में नजरबन्द हैं
कौन है जो हमारी पीठ पर रीढ़ की जगह
ढूँढ़ता है कुर्सी
क्यों हमारी सांसों में पड़ गई हैं दरारें ।

कुछ लोग तलाश कर रहे हैं
किराये के हत्यारे
कुछ लोग ढूँढ़ रहे हैं अपने दास्ताने
कार में सवार औरतें ढूँढ़ रही हैं
समुद्री किनारा
और टीवी ढूँढ़ रहा जिन्दा मस्तिष्क

समय की परिधि पर
दौड़ने वाले जागरूक पाँव
तलाश कर रहे हैं ऐसी देहरिया
जहाँ मिल सके उन्हें भरोसा
कि वे अपने ही देश में हैं
देश,
जिसमें अब भी संभावना है दीया जलने की
हर रात होता है अन्धेरा घना
हर रात जलता है एक दीया
चुपचाप ।
कैसे प्रकाश की तलाश है हमें

कैसे अन्धकार से घिरा बीज
क्या समीकरण है समकालीन समय के
समाचार पत्रों का
क्या सत्य है शान्ति-सम्मेलन के
उद्घाटन सत्रों का
किसी बड़े सपने में टकरा रहे हैं सब जैसे
किसी अज्ञात दुर्भावना से ।

समय के पँख कभी नाजुक नहीं होते
परिन्दे हमारी ही आकांक्षाएं हैं उड़ती हुई
गगन में ।
यह गगन वही है
ये परिन्दे भी वही है ।

हाय ! हमारी उड़ान कहाँ है ?
हाय ! हमारे पँख कहाँ हैं ?

दस

पृथ्वी हर क्षण दे रही है आवाजें
लौट आओ ! लौट आओ !!
सुदूर समुद्रों के तटों पर उड़ते
राजहंसों का स्वप्न भ्रान्ति के सिवा कुछ नहीं है
लौट आओ ! ओ मानस के पुत्रो !
अपनी जड़ों की ओर लौटो !!

कोई भी आवाज अनसुनी नहीं रहती
और फिर माँ की आवाज
पुत्र न सुने ?
परन्तु कैसे सुने !
कैसे जाने यह कला सनातन ।

बीज न तो लौटना जानता है
और न ही देखना

समुद्री तटों की उड़ान का सपना

वह तो परवश है–
जैसा सपना देखती है माँ
वैसा ही बन जाता है वह–

कैसा स्वप्न देख रही है माँ
कैसे पहचाने पुत्र माँ के स्वप्न को ?

इधर रचे जा रहे हैं
चक्रव्यूह दर चक्रव्यूह
मारे जा रहे हैं अभिमन्यु-दर-अभिमन्यु
योद्धा-दर-योद्धा
योजन-दर-योजन
दुर्योधन ही दुर्योधन !
अर्जुन...!
अर्जुन
भूल गया है अपना गाँडीव
किसी सीरियल में रखकर ।

युधिष्ठिर ढूँढ़ रहा है वह कुत्ता–
जिसे साथ लेकर जा सके वह किसी स्वर्ग में
भीम तलाश कर रहा है गदा कोई जादुई
नकुल और सहदेव कर रहे हैं–

विदेश यात्राएं ।

निर्विवादित रूप से यह समय
सर्वाधिक विवादास्पद है–
महान भारत के लिए ।

महान भारत का महाभारत कहें
याकि महाभारत का यह भारत महान
जो भी हो कुछ बात है कि हस्ती
मिटती नहीं है हमारी
फिर क्यों–
सिमटता ही जा रहा है यह
अपने आकार में– आकार !
जो रूप है स्वयं को सिरजते हुए
परमात्मा का ।

विश्व का यह प्रथम कवि
मौन जरूर है किन्तु किसी
वैद्य की तरह रोगी की
महानतम् रुग्णताएं देखता हुआ
उसकी विराट देह में
चिन्तित जरूर है–
व्यग्र नहीं !
उसे अब भी उम्मीद है

रोग समझ लेने की ।

राजा—
जितने उदार आज हैं
कभी इतिहास में ऐसी उदारता नहीं पनपी
किसी राजा के हृदय में
फिर भी यदि सूखा है प्रजा के सिर पर
मंडराता हुआ—
तो जरूर कोई पैनी नजर उतर गई है
राष्ट्र की आत्मा में ।

कुछ सन्देहास्पद देख रहे हैं मन्त्रिगण
राजदूत मैत्री का सन्देश लिए भटक रहे हैं
समाधियों पर ।
विपक्षी नेता तलाश कर रहे हैं कनस्तर
और किसान—
तलाश कर रहा है जमीन
चुड़ैलें तलाश कर रही हैं
मांसल बदन के गठीले युवा
अन्धेरे तलाश कर रहे हैं रोशनीघर

सन्देहों का शेषनाग उठाकर अपना फन
धरती को अपने गलुण्ड में दबाकर
जा बैठा है शत्रु देश के मचान पर ।

सावधान !
ऐ मेरे प्यारे वतन सावधान !
ऐ मेरे हमवतन सावधान !
बीज में छुपे अपने समय के सत्य संकल्प
झिंझोड़ रहे हैं हमारी चेतना के
अंशावतार को लगातार– हर क्षण !

बहुत कम समय है हमारे पास
दमदार लोगों की एक पूरी खेप तैयार है
अपने आपको होम कर देने के लिए ।

क्या है वास्तुशिल्प हमारे वर्तमान का
कभी-कभी लगता है वह हार्ट-अटैक हुए
आदमी जैसा पस्त ! .
तो कभी-कभी लगता है ठर्रा पीकर पड़े
मजदूर जैसा मस्त !

केवल अपने वजूद के लिए
सावचेत होना–
होते ही चले जाना
सबसे बड़ा सबक है इस समय का

कई जादूगर, कई नेता, कई मान्त्रिक
अपने समय के शिलालेख

लिखने में मशरूफ हैं और
सब कुछ उतरता चला जा रहा है
बीज में
बीज– जो अपनी कच्ची उम्र से ही
लगता है सीखने अपने समय की सारी भाषाएं
उसे सब पता है कि नापाक इरादों के साथ
मिट्टी पर अपने पॉव रखनेवाले
हमलावर मुल्क की किन खुफिया सुरंगों से
होकर पहुंचते हैं हमारे गिरेबॉ तक
और वह विवशता भी–
जो ढोती है इसे ।

कितने ही मनुष्य उठते हैं सुबह
अपने थके कन्धों के साथ
कितने ही हाथ उठते हैं दुआ के लिए
हर एक सांस पर !
रसोई से लेकर चक्की तक
और कोल्हू से लेकर बैल तक
हर कहीं दिखते हैं–
ध्वस्त होती कामनाओं के बंजर खेत ।

पेशावर हो या अहमदाबाद का बदनाम
मुहल्ला कोई
त्रिकाली संध्योपासक हो या हो

कठमुल्ला कोई

सांगोपांग लुप्त होती सभ्यता के
कंगूरे भर हैं–
जिसे होना चाहिए– वह नहीं है
कहीं भी !

कुछ बहुत शातिर बूढ़े उतार कर नकाब अपने
कराने लगे हैं चेहरों की प्लास्टिक सर्जरियां
वे सोचते हैं भारत की गर्मियों को लेकर
और बिताते हैं स्वीट्जर लैण्ड में सर्दियॉ

विश्व का भूगोल जिस गिरफ्त में है–
उसके चहुँदिशी परमात्मा को करते हुए नमस्कार
वे नितान्त चतुराई से अपने जादुई
किले बनाने में हो जाते हैं हर दफे
कामयाब !

उनके अस्तर से उठती है चन्दन की खुशबू
उनके कदमों में लौटती हैं कामधेनुएं
वे सर्राफा बाजार के वीरप्पन हैं
उनके लिए हमारी तरह दिशाएं
चार नहीं– छप्पन हैं ।
कभी-कभी तो लगता है–

सड़कें, पहाड़, नदियां और
यहाँ तक की अन्तरिक्ष भी है
उनके कब्जे में
वे किसी भी कृत्रिम उपग्रह से
छोड़ते हैं एंथ्रैक्स के जीवाणु
और डाल देते हैं स्तम्भन में
परमात्मा के जीन बैंक को ।

हमारे वजूद से टकरा रहे हैं विमान
हमारे वजूद से टकरा रहा है ज्ञान
हमारी रग-रग में बह रहा है
सृष्टि का सुन्दरतम संविधान ।

किन्तु काल की महानिद्रा का स्वप्न
होता ही जा रहा है भारी हम पर
लदे हुए भारी बोझ से ट्रक जैसे
घुसते ही जा रहे हैं जेहन के
अन्धेरे घाटी प्रदेश की उच्छृंखल
घुमावदार– जंगली सड़कों पर ।

सड़कें–
जिनसे होकर गुजर रही है
हमारे जीवन की सबसे बड़ी रक्तिम नदी
जिसके प्रश्नों से घिरती ही जा रही है

• ...यह महानतम् सदी ।

कुछ छलावे से प्रतीत हो रहे हैं
समुद्री बेड़ों पर लदे सियासतदानों के
दावे–
निरीह मनुष्य को ही दिया जा रहा है
करार
सदी का सबसे बड़ा आतंकवादी फरार !

मन के बियाबान में भटक रही है
अवश प्रेत-आत्माएं
आत्मश्लाघा में डूबे हैं– कवि
प्रवंचना से भरी है समकालीन कविता
बिगड़ती ही जा रही है
कानून व्यवस्था की तबीयत
गुस्साते ही जा रहे हैं
रक्त से भरे सीने लिए जाँबाज सिपाही
बारूद बिछाता ही जा रहा है दुश्मन का हाथ
हमारी सांस की नलियों में कहीं गहरे !

त्रिकालदर्शी महात्माओं के दृष्टिपथ से
गुजरता महाकाल का रथ–
अब घोंटता है हमारी अभीप्साओं का गला
जर्जर आत्माओं का

रूदन किसे लगेगा भला !
सावधान !
अपने भीतर गर्जते महाकाल के
सिंहनाद से सावधान !
सुख और दुख के मायाजाल से सावधान !
अपने से अपने हितैषी से सावधान !
पराये से पराये शत्रु से सावधान !

वतन–
चाहे वह कोई भी हो, कैसा भी हो,
कहीं भी हो– बसने की कामना भर है
सनातन–
जो कोई भी आहत करता है–
इस कामना का हृदय
वही बन जाता है शत्रु सनातनता का ।

यह सबसे ज्यादा सनातन समय है
यह सबसे ज्यादा सनातन होने का समय है ।

हत्यारा अपने ढंग से हो रहा है सनातन
सन्त अपने ढंग से ।
ढोंगी अपने ढोंग को ले जा रहा है
सनातन ढोंग तक
और दानी पहुंचा रहा है

अपने दान को सनातन ऊंचाई तक

जड़ों में छुपाए जा रहे हैं अणु बम
जड़ों में ही दबाए जा रहे हैं मन्दिर
जड़ों में ही किया जा रहा है राज्याभिषेक
जड़ों में ही मिल रहा है सारा रक्त और पसीना

यह गीत कहाँ से सुन रहा हूँ मैं
कौन है जो अन्धेरी रातों में जलाकर
लालटेन–
आज भी लिख रहा है
शकुन्तला को प्रेम-पत्र
कैसे बची रह गई है पृथ्वी की
जिजीविषा–
क्यों नहीं नष्ट होता है–
हमारे मन से हरापन !

वस्तुतः बहुत कम जानते हैं हम
हमारे ही जिस्म का गणित
शिव खेड़ा हों या हों मोहम्मद रफी
सब हमारे भीतर की खूबसूरती को
जानने की कला है–
जो फूट सकती है सिर्फ इन्सानी
जिस्म से ।

हम सब गुजर रहे हैं मृत्यु-घाटी से होकर
अमरता के शिखर पर खड़े मोक्ष के उत्तराधिकारी
हमारे कर्मो को तौल रहे हैं अमेरिका के
सदर बाजार में
और विश्व के रहनुमा अपने हरम के
दस दरवाजों में ढूँढ़ रहे हैं–
विश्व साम्राज्य का सिंहासन

अंगूठियों के नगीनों पर टिकी है
कुबेर की अर्थ-व्यवस्था
कंगूरों पर लटके हैं जासूसों के गनभेदी
कैमरे–
पृथ्वी के तल में रेंग रहे हैं शिव के
अघोर साँप
चींटिया ढूँढ़ रही हैं अन्न में छुपा आलोक

मनुष्य दौड़ रहे हैं शब्दों के पीछे
हत्यारे मांग रहे हैं शरण मन्दिरों में
कत्लगाह बन गया है इन्द्र का गोलोक

कुछ बेहद खुफिया-सा घट रहा है
हमारे बीच ही कहीं ।
कभी हिलता है आसमाँ तो कभी
काँपती है जमीं

कोई कहता है उसका कर्ता-धर्ता
अमेरिका है तो कोई पाकिस्तान !
न मालूम हमारे जेहन का
कौनसा अफगानिस्तान है वह-
जिसमें कब्रें गा रही हैं
अपनी प्रेमकथाओं के दुखड़े
ऊंची आवाज में ।
अब कोई रिश्ता बाकी नहीं रहा-
किसी दर्द और साज में ।

गाड़ियां दौड़ रही हैं सरपट राजपथ पर
अभिमानी देवताओं की चाल से
रक्त टपक रहा है अप्सराओं के रूमाल से
संगीन पर बैठकर चिड़िया गा रही है
ऋतु का पहला गीत
मौसम कुछ अधूरा-अधूरा सा खत
लग रहा है पहला-पहला
और मित्रों पर मार रहे हैं दुश्मन नहले पर दहला

बीज अवश, क्रान्तिहीन समय का
सबसे कोमलतम संवेदन खोजता
अब भी है उम्मीदजदा कि
पृथ्वी के हरे-भरे होने के दिन
अब दूर नहीं

बहुत निकट महसूस कर रहा है
वह उन हस्ताक्षरों की ध्वनि
जिनसे उठ रहा है पृथ्वी को
भस्म कर देनेवाला काला जहर
निश्चय ही--
कोई भी परमात्मा बहुत देर तक
सहन नहीं कर सकता यह कहर !
संक्रमण से उत्पन्न हो गई है
वर्णशंकरों की एक पूरी पीढ़ी
जिसने बनाकर रख छोड़ा है संस्कृति को
साँप और सीढ़ी
आमादा हो रहे हैं
बनाने को ऋणी सूदखोर सरमायेदार !
आकाश को फाड़ डाल रहे हैं कृत्रिम राडार !

वनमानुष की तरह जीने वाले सिखा रहे हैं
सभ्यता का सबक
डाल दिया गया है हमारी नींवों में नमक
छूट कर गिर रहा है हर बार
हमारे हाथों से नींव का पत्थर
वह जो भूला दिया गया है--
इस समय के ताजमहल को बनाने में राजपथ पर।
यह किसी बुरी नजर का ही कमाल है
यह तो बीज की रूह का हाल है !

हाय ! हमारी रूह कहाँ है ?
हाय ! हमारी रूह के बीज कहाँ हैं ?

ग्यारह

धरती की अर्द्ध गोलाकार तस्वीर
अपने गले में टाँगकर झांसा देने वाले दुनिया को
अब भले ही कहें कि--
हम सर्वश्रेष्ठ सभ्यता के जनक हैं
लेकिन कहाँ है वह संगीत
जिसकी खोज में ही सब कुछ किया-धरा है
आधुनिक युग के सत्ताधीशों ने ।

वे चारपाइयों पर नहीं बदलते हैं करवटें
उनकी आँखों में औंधी पड़ी रही हैं अप्सराएं
जादूगरों की फौज तैयार करनेवाले ये जादूगर
अब उन्नति के शिखर पर--
खड़े होकर ढूँढ़ रहे हैं मुक्ति का मार्ग !

उन्होंने खुली छोड़ दी है जनसंख्या

धुनने के लिए सिर
अखबारों में वन्द हो गई है हमारी
इच्छाएं अस्थिर !
सन्त सड़क पर उतारकर निकाल रहे हैं
बुहारी ।
और सुबह की प्रतीक्षा कर रहे हैं
स्कूल जाते बच्चे सफारी ।

बदहवास होकर घूम रहे हैं जासूस गुस्साए
वेश्याएं गर्म गोश्त की खोज में कर रही हैं
समुद्री यात्राएं
वैज्ञानिक परखनलियों में डालकर प्रकृति
कर रहे हैं उस पर आणविक अभिचार
और मनुष्य खड़ा है उनके सामने लाचार ।

वहीं दूर सुनाई पड़ रहे हैं शान्ति के ढोल !
आस्तीन चढ़ा रहे हैं छल-प्रपंच के देवता !
मृत्यु-गीत गा रही हैं गणिकाएं—
सम्राटों के शयन-कक्ष में
प्रहरी कर रहा है तलाश दुश्मन की पोल !

हम पर थोपना चाहता है यह समय
अपने समय का सबसे बड़ा दुस्साहस
खेलकर जुआ अदने-से आदमी पर

कर रही है मायापति बहुराष्ट्रीय कम्पनियां
अट्‌ठहास !

हाथ में लेकर भिक्षापात्र--
सुदामा भटक रहा है मथुरा का
नक्शा ढूँढ़ते हुए देश के बियावान में
जीवन अगर कहीं बचा है तो अब
सिर्फ कब्रिस्तान में ।

यह तय है कि यदि कुछ कगार जैसा
हो सकता है--
तो यह अब आ चुका है किसी भी
विनाश के लिए
ईश्वर भी थक गया है--
अपनी बीसियों भुजाओं में उठाए
नींद में डोलते मदहोश संसार की
क्षुद्र वासनाएं !

हमारे कन्धों पर अब अर्थी है समय की
वासना के अन्धे कुंओं में रेंगती
हमारी देह हो गई है इतनी जीर्ण-शीर्ण
कि अब नहीं लगता कोई भी परमात्मा
उसे आलोकित करने की जिज्ञासा
रख पाएगा भीतर अपने ।

मित्रो !
फिर भी हथेलियों के बीच
दीया जलाकर रखनेवाले
इस समय की सबसे बड़ी आवश्यकता है

लेकिन
हाय ! वे जलते दीये कहाँ हैं ?
लेकिन
हाय ! वे हथेलियां कहाँ हैं ?

बारह

भय के घोड़ों पर सवार हैं
हमारी समस्त प्रार्थनाएं
मृत्यु की घाटी में उतर गई हैं
हमारी समस्त वासनाएं
पृथ्वी के उत्तरी गोलार्द्ध से लेकर
दक्षिणी गोलार्द्ध तक–
दण्डवत करती हुई दीख पड़ रही हैं
हमारी क्षुद्र कामनाएं !

कुछ है जो अब हमसे
सुलझाया नहीं जा सकता
कुछ है जो हमसे अब
बहलाया नहीं जा सकता
कुछ है जो हमारी समझ से परे है
कुछ है जो हमारे जख्म हरे हैं ।

यूँ कहने को हम जरूर
एक-दूसरे के साथ हैं
लेकिन सत्य कुछ और है
एक-दूसरे की गर्दनों पर ही
हमारे हाथ हैं
फिर भी हमारा चूल्हा साझा है
वैसे ये खबर कितनी ताजा है !

आरती और गाली में अब फर्क नहीं रहा
आदमी के भीतर आदमी का अर्क नहीं रहा
केवल नींद में चलते हुए छायाचित्र हैं सब
कहने भर को हां एक-दूसरे के मित्र हैं सब
वरना आज देखें उघाड़कर यह चादर जिस्म की
नहीं मिलेगी पूरी सृष्टि में मच्छरदानी इस किस्म की

माना कि यह कलियुग है, वह भी घोर !
नहीं मिलता हमें अब सत्युग का छोर;
फिर भी सन्त-महात्मा लगाकर अपना जोर
जगा रहे हैं हमारे भीतर के गंवार-ढोर !

वे सब जो ताड़ना के अधिकारी हैं
आज उन्हीं के नीचे कुर्सी की सवारी है
यूँ कहने भर को हम सब रिश्तेदार हैं
लेकिन हमसे बड़ा कौन रिश्तों का व्यापारी है--

यह व्यापार के लिए बेहतरीन वक्त है ।
इसीलिए हर आदमी
ऊपर से नरम और भीतर से सख्त है ।
गली-मुहल्ले से लेकर गांव और शहरों तक
हर एक आदमी कटा हुआ दरख्त है ।

एतबार की हदों तक मर मिटने वाले
हमवतनो !
हमारे देश के नक्शे में जहर बाद
लकीरें खींचनेवाले दुश्मन का
नंगा हौसला अब बन गया है
हमारे सिर पर टंगी— नंगी तलवार ।

वह जिससे
दो-दो हाथ हुए बिना कुछ भी
संभव नहीं—
न युद्ध ! न शान्ति !!
न पुनरुत्थान ! न क्रान्ति !!

हमें फिर से समझना होगा
एक-एक चीज को हमें फिर से
आकार देना होगा बीज को ।
फिर से सहारा देना होगा हमें
पड़ौसी की टूटी हुई कमर को

फिर से जानना होगा हमें समर को ।

वह जो कुछ भी कहा जा सकता है
मनुष्य की भाषा में
अब न कहने योग्य रह गया है
बेबसी की ओढ़कर चादर मैली
हमारा धर्म गंगा में बह गया है;
हाय !
कौन मेरे कान में–
यह कविता कह गया है ?

रोज– एक ही बार उठता है
पूरब की पसलियों में सूर्य के घोड़ों का
हिनहिनाना–
एक ही बार होता है चाँद में
बूढ़ी काकी का खिलखिलाना
एक ही बार झरता है मोती सीप में
एक ही बार होता है उजाला किसी दीप में !

ओ मानस के राजहंस !
तू भी एक बार खोलकर अपना तीसरा
नेत्र !
इस अमूर्त विश्व-युद्ध का
अवलोकन तो कर !

अपनी अंजुरी में जरा प्रार्थना के
पुष्प तो भर !
फिर खोलकर द्वार ममता के एक बार
धंसती ही जा रही पृथ्वी का
ऋण तो स्वीकार !

वह अपनी करुणा से भीगी
अब भी तत्पर है फसलें उगाने में
दया से आर्द्र वह अब भी
तत्पर है पाप का बोझ उठाने में ।
अपनी अन्तरंगता से अमरता को
छूने वाली उसकी सनातन कोख
अब भी तत्पर है हमें–
लोरी सुनाने में ।

उसकी पीठ पर पड़ रहे हैं जबकि
युद्ध के उन्मादी कोड़े लगातार !
उसके जिस्म को रौंद रहे हैं
हमारी वासना के घोड़े बार-बार !
अपनी लज्जा को छुपाती हो चुकी है
हाय ! द्रौपदी, फिर से तार-तार !

हे कृष्ण ! जन्म लो फिर एक बार
हे सखा ! याद करो अपना व्यवहार

हे प्रभु ! तुम तो हो सबके तारणहार
हे नाथ ! उसे दो अपनी शरण का उपहार

जरा देखो तो–
आसमाँ से नीचे उतरकर
कितने ही सन्तप्त हृदय
होकर शोकाकुल पुकार रहे हैं तुम्हें !
कितने ही ज्ञानी अपने तप से
होकर उत्तप्त गुहार रहे हैं तुम्हें !
अपनी पीड़ा के परिधान पहनकर
पाण्डव फिर से निहार रहे हैं तुम्हें !

माना कि यह महाभारत
हमारी समझ से बाहर है
किन्तु बीज में छुपी तुम्हारी सत्ता तो
ज्ञान का अथाह भण्डार है ।

जरा खोलो तात !
फिर से एक बार
अपने ज्ञान के खिड़की और दरवाजे
बिना कानों के सुननेवाले ओ परमात्मा !
जरा सुनो तो एक बार पृथ्वी के गर्भ में
उठने वाली ये गर्म आवाजें !
मनुष्य की आकृति में

अब जो कुछ भी शेष है
दरअसल !
वह मानव सभ्यता का
केवल और केवल अवशेष है ।

हे नाथ !
इस बचे-खुचे को थोड़ा-सा प्यार करलो
अपना रथ फिर से अर्जुन के लिए तैयार करलो
बीज की स्मृतियों में
जितना भी समर्पण शेष है–
उसे मुक्त हृदय से स्वीकार करलो

क्योंकि–
तुम्हीं पिता हो, तुम्हीं हो माता
तुम्हीं सखा हो, तुम्हीं हो भ्राता
यह तुम्हारी ही तो घोषणा है
हे नाथ !
अब जो कुछ भी सोचना है
आपको ही सोचना है ।

अब थक चुके हैं हमारे मन
थक चुके हैं प्राण और तन
थक चुकी है हमारी आत्मा
क्या थक नहीं चुके–

तुम भी ओ परमात्मा !

हालांकि यह सत्य है
कि शरीर और जगत नश्वर है
किन्तु इसे सहन करना
बेहद-बेहद दुष्कर है ।

यदि चाहते हो हमारा जरा भी भला
तो सिखा दो फिर से वह सनातन कला
जिसे सीखकर हम चल सकें
अन्धकार से प्रकाश की ओर !
शोक से उल्लास की ओर !

अब तुम्हें–
और कहाँ दें आवाज !
मन्दिर भी नाराज, मस्जिद भी नाराज !
टूट चुका है–
हृदय का साज आज !
जबकि सुना है–
तुम तो हृदय में ही रहते हो !

किन्तु हाय ! मेरा हृदय कहाँ है ?
किन्तु हाय ! तुम कहाँ हो ?





नाम : प्रमोद कुमार शर्मा

शिक्षा : एम.कॉम, नाटक मे एक वर्षीय पाठ्यक्रम

कार्य : आकाशवाणी, बीकानेर मे वरिष्ठ उद्घोषक

जन्म : 1 मई, 1965

पता : सी–12, रेडियो कॉलोनी
जयनारायण व्यास कॉलोनी
बीकानेर

प्रकाशित कृतियां : सच तो ये है (कहानी संग्रह), सडक पर उतरेगा ताजमहल (कविता सग्रह), सावळ–कावळ (राजस्थानी कथा संग्रह), क्लाड ईथरली (हिन्दी उपन्यास)

प्रकाशनाधीन : जिन्हे होना है युद्ध (काव्य संग्रह), क से कमला (कथा सग्रह)